ओम्

विरजानन्द आश्रम

पाणिनि महाविद्यालय

(परिचय पाठ्यक्रम एवं नियमावली)
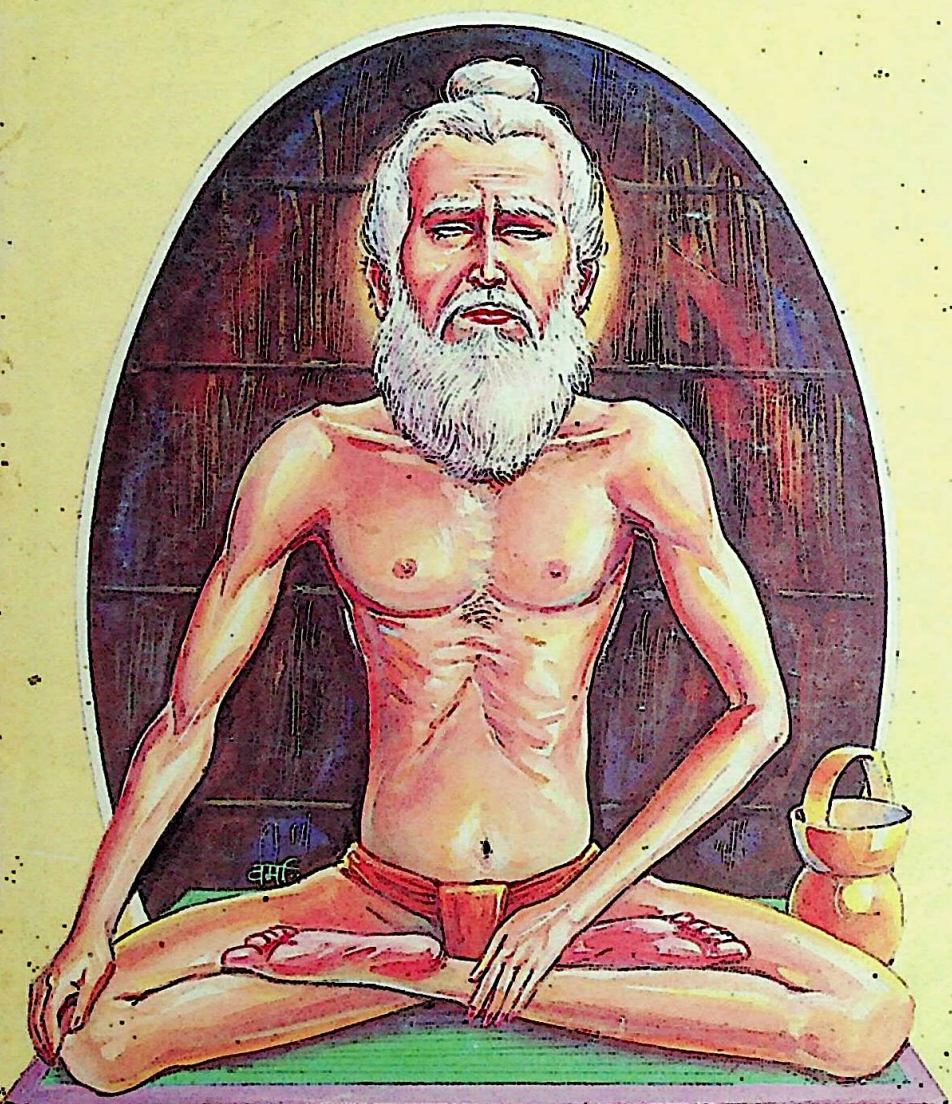
सन् १७७६ सन् १८६८

आर्षग्रन्थों के उद्धारक

गुरु विरजानन्द दण्डी

आर्ष-ज्योति के महान् उद्धारक, यतिमूर्धन्य

स्वामी श्री विरजानन्द जी दण्डी

(संक्षिप्त परिचय)

जालन्धर (पञ्जाब) जिले के करतारपुर नगर के समीप, बेई नामक तनीयसा नदी के तट पर स्थित गङ्गापुर ग्राम के एक भरद्वाज–गोत्रीय सारस्वत ब्राह्मण के परिवार में सन् १७७८ में आपका जन्म हुआ। आपके माता–पिता के नाम हैं–श्रीमती सरस्वती जी, श्री नारायणदत्त जी शर्मा । आपने अपने पिताश्री के चरणों में ही संस्कृत का अध्ययन प्रारम्भ किया तथा 'अमर–कोश' कण्ठस्थ किया। पिता जी से 'सारस्वत व्याकरण, हितोपदेश' आदि पढ़ते हुए उर्दू, फ़ारसी का भी अभ्यास किया । बाल्यावस्था में ही आपके नेत्र शीतला की भेंट हो गये और माता–पिता भी दिवंगत हुए।

सन् १७९२ में आपने गृहत्याग किया और संस्कृत–सम्भाषण के दृढ़ संकल्प के साथ यात्रा आरम्भ की। आप नयनविहीन अवश्य थे परन्तु आप में उत्साह–सम्बल का अक्षय भण्डार था। अतः निर्भीकता से मार्ग पूछते हुए, सर्वविध क्लेशों का आलिंगन करते हुए अग्रसर हुए। अनेकों धार्मिक – भक्त – पुरुषों, साधु–सन्तों और विद्वानों की सत्संगति प्राप्त करते हुए ऋषिकेश, हरद्वार, काशी, गया, कालिकाता आदि स्थानों में पदयात्रा की ।

अष्टाध्यायी आदि आर्ष–ग्रन्थों के परम भक्त, सिद्धान्त–कौमुदी के प्रख्यात विद्वान् स्वामी श्री पूर्णानन्द जी दण्डी से हरद्वार में सन्यास–दीक्षा ग्रहण कर आप ''स्वामी विरजानन्द दण्डी'' के नाम से प्रसिद्ध हुए और उन्हीं दीक्षा–गुरु से सम्पूर्ण सिद्धान्त–कौमुदी पढ़ी और आर्ष–ग्रन्थों के उद्धार की प्रेरणा प्राप्त की। उक्त यात्रा में विविध विद्वानों से कौमुदीत्रय, मनोरमा, शेखर, महाभाष्यादि समग्र व्याकरण तथा नवीन व प्राचीन न्याय और वेदान्त, शेष मीमांसादि दर्शन, उपनिषद्, आयुर्वेद, साहित्यदर्पण, कुवलयानन्द, काव्यप्रकाश, रसगंगाधर आदि के अध्ययन के साथ–२ अध्यापन भी करते रहे और योगक्रियाओं एवं संगीत, वीणा–वादन आदि कलाओं में प्रवीणता प्राप्त की । इस प्रकार लगभग ३०–३५ वर्ष की अवस्था तक सर्वविद्याओं में पारंगत होकर काशी की विद्वन्मण्डली के द्वारा सत्कृत हुये और **'प्रज्ञाचक्षु'** की उपाधि प्राप्त की।

तदनन्तर मथुरा में स्थिर होकर आजीवन अध्यापन का कार्य तन्मयता से करते रहे। आर्ष–ग्रन्थों के प्रचलनार्थ पाणिनीय अष्टाध्यायी एवं पातञ्जल महाभाष्य के हस्तलेखों का अन्वेषण कर उन्हीं का अध्यापन आरम्भ किया और कौमुदी आदि अनार्ष – ग्रन्थों के अध्ययन का विरोध किया। आपके अनेकानेक योग्य शिष्यों में स्वामी दयानन्द जी सरस्वती प्रमुख थे। उनसे आर्ष–ग्रन्थों का उद्धार एवं अविद्या अन्धकार का नाश करने का गुरुदक्षिणारूपी वचन लेकर अपने स्वप्न को साकार किया।

॥ ओम् ॥

विरजानन्दाश्रम-रेवली (सोनीपत)

पूर्ववृत्त-प्रथम चरण (सन् १९२१-१९३४)

१.१ विरजानन्द आश्रम - हरदुआगंज (सन् १९२१)

आर्ष–पाठविधि (सांस्कृतिक पाठ्यक्रम) को मूर्तरूप प्रदान करने के लिए आप्तवाक्यप्रमाणज्ञ गुरुवर श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु महाराज ने साधु आश्रम हरदुआगंज (पुल काली नदी, अलीगढ़, उ० प्र० – तात्कालिक संयुक्त प्रान्त) में आश्रम की स्थापना सन् १९२१ में की। सुप्रसिद्ध वीतराग संन्यासी पूज्य स्वामी श्री सर्वदानन्द जी महाराज ने साधु आश्रम में पूर्व से चलने वाली अनार्ष – पाठविधि को समाप्त करके गुरुवर पं० श्री जिज्ञासु जी को आर्ष–पाठविधि के सञ्चालन का सम्पूर्ण दायित्व सौंप दिया । श्रद्धेयवर पं० श्री जिज्ञासु जी ने अपने सहयोगियों – महावैयाकरण पं० श्री शंकरदेव जी (नौनेर–उ० प्र०) और पं० श्री बुद्धदेव जी दर्शनाचार्य (धार–मध्यप्रदेश) के साथ पूज्यवर स्वामी श्री सर्वदानन्द जी महाराज के सान्निध्य में ही अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया । **इस आश्रम का नाम आर्ष - ग्रन्थों के उद्धारक प्रज्ञाचक्षु गुरु स्वामी श्री विरजानन्द जी दण्डी के नाम पर "विरजानन्द आश्रम" रखा गया।**

इस आश्रम में प्रविष्ट होने वाले प्रारम्भिक प्रमुख छात्र –शिवदत्त, किशोरी लाल (स्व० पं० श्री इन्द्रदेव जी, आचार्य, गुरुकुल देवरिया), अश्विनी कुमार, युधिष्ठिर (स्व० म० म० पं० श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक), भद्रसेन (स्व० पं० श्री भद्रसेन जी, अजमेर) और वाचस्पति (स्व० पं० श्री शंकरदेव जी के छोटे भाई, नौनेर, उ० प्र०) ।

१.२ विरजानन्द आश्रम - गण्डासिंह वाला (सन् १९२१-१९२५)

गुरुवर श्री जिज्ञासु जी ने अपने दो सहयोगियों के साथ सभी विद्यार्थियों को लेकर दिसम्बर सन् १९२१ के प्रारम्भ में विरजानन्द आश्रम को अमृतसर के समीप मजीठा रोड़ पर स्थित "गण्डासिंह वाला" ग्राम में स्थानान्तरित

कर दिया। पूज्य स्वामी श्री सर्वदानन्द जी महाराज के करकमलों से आश्रम का विधिवत् उद्घाटन हुआ । यहां इस आश्रम का सञ्चालन "सर्वहितकारिणी सभा" (अमृतसर) की ओर से होता रहा ।

इस अवधि में प्रविष्ट होने वाले प्रमुख छात्र – याज्ञवल्क्य (स्व०, अलीगढ), यशपाल सिंह (स्व०, हरदुआगंज) भगवद्दत्त (स्व०, डेरा गाजीखाँ, अविभाजित भारत), भीमसेन (स्व०, अलीगढ), सत्यव्रत एवं महेन्द्र कुमार (दोनों मुरादाबाद), सत्यदेव (स्व० पं० श्री १०८ सत्यदेव जी वासिष्ठ, भिवानी, हरियाणा) तथा धर्मदेव (पं० श्री धर्मदेव जी निरुक्ताचार्य, अजमेर), शम्भुदत्त एवं गुरुदत्त (दोनों बटाला, अमृतसर) आदि ३५ छात्र प्रविष्ट हुए ।

शुद्धि आन्दोलन में भाग लेना – सन् १९२३ में स्वामी श्री श्रद्धानन्द जी, महात्मा श्री हंसराज जी, पं० श्री मदनमोहन जी मालवीय तथा शाहपुरा (मेवाड़) के श्री नाहरसिंह राजा आदि प्रतिष्ठित व्यक्तियों के सम्मिलित प्रयास से ब्रजमण्डल में चलने वाले मलकानों की शुद्धि के कार्य में गुरुवर पं० श्री जिज्ञासु जी ने अपने सहयोगी पं० श्री बुद्धदेव जी दर्शनाचार्य तथा अपने सहपाठी पं० श्री अखिलानन्द जी झरिया और अपने आश्रम के ४–५ बड़े छात्रों के साथ भाग लिया। यह शुद्धि कार्य लगभग डेढ़ वर्ष (१९२३ – २४) तक भरतपुर, मथुरा, आगरा आदि स्थानों पर चलता रहा । आश्रम में अध्ययन एवं अध्यापन का कार्य पं० श्री शंकरदेव जी कराते थे । यहां बड़े विद्यार्थियों का अध्ययन काशिका पर्यन्त हुआ। शुद्धि–कार्य से लौटने के उपरान्त पं० श्री बुद्धदेव जी ने गुरुवर श्री जिज्ञासु जी का साथ छोड़ दिया।

१.३ विरजानन्द आश्रम-काशी (१९२६-१९२८)

जनवरी सन् १९२६ के आरम्भ में विरजानन्द आश्रम का स्थानान्तरण काशी में कर दिया गया । काशी में गुरुवर श्री जिज्ञासु जी महाराज अपने सहयोगी पं० श्री शंकरदेव जी और नौ छात्रों इन्द्रदेव, वाचस्पति, भद्रसेन, युधिष्ठिर, याज्ञवल्क्य, भगवद्दत्त, यशपाल, सत्यदेव और धर्मदेव – के साथ काशी में सप्तसागर मुहल्ले में (काशी देवीमठ के समीप) आश्रम का सञ्चालन करने लगे। आर्थिक व्यवस्था

अपर्याप्त होने के कारण सभी का मध्याह्न भोजन अन्नक्षेत्रों में हुआ करता था । युधिष्ठिर आदि छात्रों को पढ़ाते हुये स्वयं गुरु जी तथा तीन बड़े छात्र (इन्द्रदेव, वाचस्पति, भद्रसेन) वैयाकरण–मूर्धन्य पूज्य पं० श्री देवनारायण जी तिवारी से सम्पूर्ण महाभाष्य का अध्ययन करते रहे । यहां युधिष्ठिर आदि का काशिका तक अध्ययन हुआ ।

गुरुवर श्री जिज्ञासु जी का घनिष्ठ परिचय श्री रामलाल जी कपूर कपूरों (अमृतसर) परिवार के साथ पहले ही हो चुका था । यह परिवार आश्रम के लिए कागज, कापी तथा अन्य स्टेशनरी सामग्री की निःशुल्क व्यवस्था करता था। इस परिवार ने आश्रम के काशीवास में भी पूर्ण सहयोग दिया ।

शुद्धि आन्दोलन - इस अवधि में पूज्यपाद श्री देवनारायण जी तिवारी की प्रेरणा एवं माननीय पं० श्री मदनमोहन जी मालवीय की पांच सौ रुपये मासिक की सहायता से गुरुवर श्री जिज्ञासु जी और तीन बड़े छात्र लगभग छः मास तक शुद्धि – कार्य में लगे रहे ।

१.४ विरजानन्द आश्रम-अमृतसर (सन् १९२८-१९३१)

कपूर बन्धुओं के विशेष आग्रह और आश्रम के पूर्ण व्यय की व्यवस्था के आश्वासन के उपरान्त अप्रैल १९२८ में विरजानन्द आश्रम का स्थानान्तरण अमृतसर में कर दिया गया । पं० श्री शंकरदेव जी पहले ही साथ छोड़ चुके थे। भद्रसेन योग के प्रशिक्षण के लिए लूनावाला (पूना) चले गये, इन्द्रदेव और वाचस्पति काशी में ही रह गये । श्री गुरु जी के साथ शेष छात्र अमृतसर पहुँचे और आश्रम कपूर परिवार के राम–भवन, अमृतसर में चलने लगा । सन् १९३१ के दिसम्बर मास तक आश्रम यहीं चलता रहा और युधिष्ठिर आदि बड़े छात्रों का महाभाष्य, निरुक्त (दुर्ग एवं स्कन्द स्वामी की टीका सहित) तथा वैदिक वाङ्मय का विशेष अध्ययन सम्पन्न हुआ ।

१.५ विरजानन्द आश्रम-काशी (सन् १९३२-१९३४)

पूर्व मीमांसा का विशेष अध्ययन करने के लिए स्वयं श्री गुरुवर अपने सभी छात्रों को लेकर एक बार पुनः जनवरी सन् १९३२ के आरम्भ में काशी

पहुंचे। काशी के शीतला घाट पर आश्रम चलने लगा । इस समय पं० श्री शंकरदेव जी भी मीमांसा के अध्ययनार्थ काशी आकर पुनः श्री गुरुवर के साथ आ मिले । यहां मीमांसा के पारंगत विद्वान् म० म० पं० श्री वेंकट सुब्रह्मण्य जी शास्त्री (श्री चिन्नस्वामी जी शास्त्री) और इनके दामाद एवं शिष्य पं० श्री पट्टाभिराम जी शास्त्री से सम्पूर्ण मीमांसा–शास्त्र (शाबर–भाष्य, कुमारिल भट्ट के श्लोकवार्त्तिक एवं तन्त्रवार्त्तिक, शास्त्रदीपिका आदि) का अध्ययन हुआ । इस अध्ययन में गुरुओं के साथ युधिष्ठिर आदि छात्र भी सम्मिलित थे । पूज्य गुरु जी ने सत्यदेव को ज्योतिष का विशेष रूप से अध्ययन कराया । इस प्रकार आश्रम की स्थिति सन् १६३४ के दिसम्बर तक काशी में ही रही ।

व्याकरणशास्त्र का महत्त्व

तद् द्वारमपवर्गस्य वाङ्मलानां चिकित्सितम्।
पवित्रं सर्वविद्यानाम् अधिविद्यं प्रकाशते ।।

इदमाद्यं पदस्थानं सिद्धिसोपानपर्वणाम् ।
इयं सा मोक्षमाणानामजिह्मा राजपद्धतिः।।

यह व्याकरण मुक्ति का द्वार या उपाय है; वाणी के मलस्थानीय जो अपभ्रंश शब्द हैं, उनका चिकित्सक या अपनयहेतु है; सम्पूर्ण विद्याओं में व्याकरण विद्या पवित्र है तथा सारी विद्याएं शब्दसंस्कार के लिये इसी का आश्रय लेती हैं।

सिद्धि अर्थात् मोक्ष की सीढ़ी के पर्वों में यह व्याकरणशास्त्र पहला पदस्थान या पर्व है। मोक्ष की इच्छा रखने वालों के लिये यह सरल राजमार्ग है।

— भर्तृहरि

पूर्ववृत्त-द्वितीय चरण (देशविभाजन तक)

२.१ विरजानन्द आश्रम (सांगवेद विद्यालय) - लाहौर

(सन् १९३५-१९४७)

सन् १९३५ में आश्रम का स्थानान्तरण लाहौर में किया गया। यहां कपूर परिवार ने रावी नदी के पार 'बारहदरी' के समीप बगीचे में आश्रम की स्थायी व्यवस्था की। पुराने कच्चे मकान में आवश्यक सुधार और कुछ नव निर्माण करवाकर आवास योग्य बनाया गया। प्रति सप्ताह आश्रम की लिपाई–पुताई का क्रम भी लगातार चलता था। यहां विद्युत् की व्यवस्था भी नहीं थी। अब पुराने छात्रों में से युधिष्ठिर, याज्ञवल्क्य, सत्यदेव और धर्मदेव – ये चार शेष रह गये थे।

यहां प्रथम वर्ष अर्थात् १९३५ में पूज्य गुरु जी ने 'यजुर्वेद–भाष्य–विवरण' का कार्य करते हुये सत्यदेव और धर्मदेव को निरुक्त पढ़ाया। द्वितीय वर्ष २१ अप्रैल १९३६ को आश्रम के प्रांगण में पं० श्री युधिष्ठिर जी का समावर्तन संस्कार बड़े समारोह पूर्वक हुआ। इस अवसर पर आर्यसमाज, शिक्षाजगत् एवं सामाजिक क्षेत्र के गणमान्य महानुभावों की उपस्थिति में **'विरजानन्द आश्रम'** नाम के साथ **'सांगवेद विद्यालय'** शब्द जोड़े गये। नये छात्रों के प्रवेश का उपक्रम सन् १९३६ में हुआ। लगभग १५ वर्ष के अनुभव के आधार पर श्री गुरुवर ने नये नियम बनाये। तद्यथा – पन्द्रह वर्ष से अधिक आयुवाले छात्र प्रविष्ट किये जायेंगे, अपने व्यय के लिए आर्थिक प्रबन्ध छात्र स्वयं करेंगे, प्रवेशार्थ काल निर्धारित नहीं रहेगा इत्यादि। **शास्त्रीय विषयों के अध्ययन की व्यवस्था कन्याओं के लिये कहीं पृथक् न होने के कारण श्री गुरुवर ने पृथक् निवास की व्यवस्था कर कन्याओं का अध्यापन भी यहीं (लाहौर में) प्रारम्भ कर दिया था।**

देश–विभाजन (सन् १९४७) तक नवीन प्रवेश पाने वाले प्रमुख छात्र थे – ओम्प्रकाश, ज्योतिःस्वरूप (स्व०, आचार्य आर्ष गुरुकुल, एटा), वेदप्रकाश (तीनों भाई बिजनौर), धर्मव्रत (बनवारी लाल, स्व०, बुलन्दशहर),

चन्द्रकान्त (स्व०, शिक्षा विभाग, चेन्नई, तमिलनाडु), देवप्रकाश पातञ्जल, (स्व०, बिहार; प्राध्यापक दयालसिंह कालेज, दिल्ली), यशपाल (स्व०, वैद्य, दादरी, बुलन्दशहर), वाचस्पति, अजयवीर (दोनों बुलन्दशहर), भीमसेन (सीमाप्रान्त, वैद्य, प्राध्यापक दिल्ली वि० वि०), सत्यप्रिय (स्व०, उपदेशक, लाडवा, हरयाणा), ऋषिदेव (बिजनौर), कपिलदेव (स्व०, प्राध्यापक, कुरुक्षेत्र वि० वि०), रामचन्द्र (स्व०,अध्यापक, गान्धीधाम, गुजरात), मुनीश्वरदेव (गाजीपुर, प्राध्यापक वि० वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर), वेदव्रत प्रज्ञाचक्षु (देवरिया) । हैदराबाद (आ० प्र०) निवासी स्वर्गीय श्री शंकरदेव (सांसद) ने भी कुछ काल तक अध्ययन किया ।

हैदराबाद के सत्याग्रह में भाग लेना – आश्रम के छात्र सामाजिक सामयिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में भी यथेष्ट भाग लेते रहे । सन् १६३६ के आरम्भ में आर्यसमाज की ओर से हैदराबाद की मुसलमानी निजाम रियासत में हिन्दुओं के धार्मिक कर्मों और मन्दिरों पर लगाये गये प्रतिबन्धों को हटाने के लिए जो सत्याग्रह आरम्भ किया गया था, उसमें विरजानन्द आश्रम के भी आठ छात्रों ने मई मास में भाग लिया। इनमें पं० श्री सत्यदेव जी वासिष्ठ प्रमुख थे । इन्होंने जेल में रहते हुए संस्कृत–भाषा में "सत्याग्रह – नीति – काव्यम्" ग्रन्थ की रचना की।

२० अगस्त १६४७ तक विरजानन्द आश्रम अबाध गति से लाहौर में रावी तट पर चलता रहा । अन्ततः दुःखद देशविभाजन के समय हुए भयंकर उपद्रवों के कारण आश्रम बन्द हो गया ।

ब्राह्मण का कर्तव्य

"ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्चेति"

ब्राह्मण को निष्कारण अर्थात् फल की आकांक्षा छोड़कर पालन किया जाने वाला धर्म (कर्तव्य) स्वरूप छः अंगों (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष) सहित वेद पढ़ना चाहिये और उसे जानना चाहिये।

-महर्षि पतञ्जलि

पूर्ववृत्त-तृतीय चरण

३.१ विरजानन्द आश्रम-काशी (सन् १९५१-१९६४)

अगस्त सन् १९४७ से सन् १९४९ के अन्त तक श्री गुरुवर काशी को प्रधान केन्द्र बनाकर प्रायः शुद्धि के कार्यों में व्यस्त रहे । अन्ततः मोतीझील बनारस (वाराणसी) में पुस्तकालय के व्यवस्थित हो जाने पर पुनः शैक्षणिक कार्य आरम्भ हुए । सन् १९५० के आरम्भ में श्री गुरुवर के साथ पं० श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक भी आ मिले । सन् १९५१ में विरजानन्द आश्रम का सञ्चालन पुनः प्रारम्भ हुआ । यहां कुछ छात्राएं भी प्रविष्ट हुईं। जो मोतीझील में ही पृथक् किराये के मकानों में रहती थीं । **यद्यपि कन्याओं का अध्यापन भारत-विभाजन से पूर्व रावीतट आश्रम (लाहौर) में ही आरम्भ कर दिया गया था । यहां (काशी में) स्थायी रूप से स्थिर हो जाने पर इनकी व्यवस्था पृथक् से विशेष रूप से की गई। इसके फलस्वरूप अनेक कन्याओं ने भी शास्त्रों का गम्भीर अध्ययन किया ।**

सन् १९५१ से पूज्य गुरुवर के निधन (दिसम्बर सन् १९६४) तक विरजानन्द आश्रम में अध्ययन करने वाले प्रमुख छात्र–छात्राओं के नाम इस प्रकार हैं – जितेन्द्र, विश्वमित्र (दोनों अमृतसर), वीरेन्द्र (प्राध्यापक, वि० वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर), सत्यपाल (प्राध्यापक, कालेज मसूरी), ओम्प्रकाश (स्व०, लन्दन), राजेन्द्र कुमार (अध्यापक, अरनियां, बुलन्दशहर), विजयपाल (आचार्य, पाणिनि महाविद्यालय, रेवली), व्रतपाल (हैदसबाद, आ० प्र०), क्रान्ति कुमार (अमरावती, महाराष्ट्र), दीपचन्द (राजस्थान), अमर सिंह (पटना), देवेन्द्र (स्व०, देवस्वामी, आचार्य गुरुकुल सिरसागञ्ज, मैनपुरी), रविकान्त, शशिकान्त (दोनों भाई होशियारपुर), गोपीचन्द (पं० याज्ञवल्क्य, ब्र० विष्णुचैतन्य, झाला, उत्तरकाशी), दीनदयाल (पीलीभीत, उ० प्र०) धर्मानन्द (सरलतम विधि के विशेषज्ञ, हैदराबाद, आ० प्र०), सुद्युम्न (प्राध्यापक, कालेज, बलिया, उ० प्र०) वेदप्रकाश (प्रशस्यमित्र शास्त्री, प्राध्यापक, कालेज रायबरेली), सुमेधामित्र (अध्यापक, घोसी) खेमचन्द (स्व०, मुरादाबाद, महात्मा प्रभु आश्रित जी के शिष्य), विपिन, नागेन्द्र (दोनों बिहार),

रामराज, नन्दकिशोर, राघवस्वरूप, मुनीश्वर, रामेश्वर, आनन्दतीर्थ (मध्वसम्प्रदाय के आचार्य स्व० श्री पद्मनाभाचार्य के पुत्र, आत्मकूर, आ० प्र०), सत्येन्द्र (डाक्टर, बरेली), स्वतन्त्रदेव (सन्तसमाज, झूसी, प्रयाग)आदि।

छात्राओं के प्रमुख नाम – सुश्री पुष्पादेवी (आचार्या, मातृ मन्दिर, वाराणसी), संन्यासिनी सुश्री उमानन्दन, सुश्री शान्ति (स्व०, आचार्या कन्या गुरुकुल लोवाकलां, रोहतक), सुश्री प्रज्ञादेवी (स्व०, आचार्या, जिज्ञासु स्मारक पाणिनि कन्या महाविद्यालय, वाराणसी) श्रीमती जयदेवी (प्राध्यापिका, कालेज, पानीपत), मेधादेवी (आचार्या, जिज्ञासु स्मारक पाणिनि कन्या महाविद्यालय, वाराणसी) आदि।

३.२ विरजानन्दाश्रम, पाणिनि महाविद्यालय-काशी

(सन् १९५२–१९६४)

७ अगस्त, १९५२ को काशी के लाहौरी टोला में स्थित 'सुप्रभात कार्यालय' में महामहोपाध्याय पं० श्री गिरिधर जी शर्मा चतुर्वेद (संस्कृत–विभागाध्यक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी) के करकमलों द्वारा **'पाणिनि महाविद्यालय'** का उद्घाटन हुआ । श्रद्धेय श्री गुरु जी, पं० श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक और श्री रामविलास जी शास्त्री इस विद्यालय में अष्टाध्यायी को विना कण्ठस्थ कराये ही **'सरलतम विधि'** की प्रक्रिया से एम० ए०, बी० ए० आदि के प्रौढ़ छात्रों को संस्कृत व्याकरण का ज्ञान कराते थे । कुछ मास के पश्चात् यह पठन–पाठन भी विरजानन्द आश्रम–मोतीझील में ही होने लगा। इस प्रकार दोनों संस्थाएं मिल गईं– शिक्षण पाणिनि महाविद्यालय में होने लगा और नियमपूर्वक आवास विरजानन्द आश्रम में। इस विद्यालय में १९५३ के मई–जून मास में पूज्य गुरु जी के द्वारा अष्टाध्यायी की पद्धति से संस्कृत–शिक्षण के शिविर का भी आयोजन किया गया, जिस में आठवीं से एम० ए० श्रेणी तक के छात्रों, अध्यापकों तथा अन्य प्रौढ़ व्यक्तियों ने अध्ययन किया । पठनार्थियों में महिलावर्ग भी था। इसी वर्ष में पूज्य गुरु जी की देख–रेख में सुल्तानपुर में भी अष्टाध्यायी की पद्धति के समन्वयपूर्वक हाईस्कूल चला। इस विद्यालय के प्रधानाचार्य पं० श्री देवप्रकाश जी पातञ्जल थे। इसी प्रकार श्री गुरु जी के मार्गनिर्देशन में अनेकत्र पाणिनि

महाविद्यालय सञ्चालित हुए। सन् १९५२ से दिसम्बर १९६४ तक सरलतम विधि के अनुसार संस्कृत प्रशिक्षणार्थ श्री गुरुवर अपने प्रमुख शिष्य डॉ० श्री देवप्रकाश जी पातञ्जल, श्री सत्यपाल जी शास्त्री और श्री धर्मानन्द जी शास्त्री की सहायता से उत्तर भारत में संस्कृत प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन निरन्तर करते रहे। उधर 'विरजानन्द आश्रम–पाणिनि महाविद्यालय' मोतीझील में छात्रों को गहन शास्त्राभ्यास भी कराते रहे।

पाणिनि महाविद्यालय के छात्र हिन्दी-रक्षा-आन्दोलन में –

सामाजिक गतिविधियों में भी इस विद्यालय के छात्र पूर्ववत् भाग लेते रहे । पञ्जाब (उस समय पञ्जाब और हरयाणा एक ही प्रदेश था) सरकार ने विद्यालयों में पञ्जाबी भाषा अनिवार्य कर दी थी, जिस से राष्ट्रभाषा हिन्दी पढ़ने से छात्र वञ्चित रह सकते थे। इसके विरुद्ध सन् १९५७ में आर्यसमाज ने प्रबल आन्दोलन किया । इस सत्याग्रह में विरजानन्द आश्रम–पाणिनि महाविद्यालय के चार छात्र भी सम्मिलित हुए, जिनके नाम हैं – श्री देवेन्द्र (देव स्वामी), श्री विजयपाल, श्री राघवस्वरूप और श्री बाबूलाल (सत्येन्द्र) । ये छात्र सत्याग्रह की समाप्ति पर्यन्त लगभग तीन मास तक रोहतक की कुख्यात जेल (साधारण श्रेणी) की यातनाएं प्रसन्नतापूर्वक सहन करते रहे ।

अष्टाध्यायी - महाभाष्ये द्वे व्याकरणपुस्तके ।
अतोऽन्यत् पुस्तकं यत्तु तत्सर्वं धूर्तचेष्टितम् ।।

अष्टाध्यायी और महाभाष्य ये दो ही व्याकरण के पुस्तक हैं। इनसे अतिरिक्त अन्य सब पुस्तक धूर्तों के द्वारा लिखित हैं अर्थात् वे पठनीय नहीं हैं।

-स्वामी विरजानन्द दण्डी

पूर्ववृत्त-चतुर्थ चरण

४.१ विरजानन्दाश्रम, पाणिनि महाविद्यालय-काशी (सन् १९६५-१९७०)

विरजानन्द आश्रम - काशी

दिसम्बर १९६४ में पूज्य श्री गुरुवर के निधन के पश्चात् उनके कार्यों का उत्तारदायित्व पूज्य पण्डित श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक को सौंपा गया। वाराणसी का जलवायु अनुकूल न होने के कारण वे निरन्तर वहां नहीं रह सकते थे। अतः उनकी ओर से ट्रस्ट के प्रकाशन और शिक्षण का भार आचार्य श्री विजयपाल जी विद्यावारिधि को सौंपा गया। सभी कार्य पूर्ववत् जून १९७० तक अबाध गति से चलते रहे। इस अवधि में अध्ययन करने वाले प्रमुख नवीन छात्र थे–सोमदेव (प्रवक्ता, पोद्दार आयुर्वेदिक कालेज, मुम्बई) धर्मवीर (आचार्य, पाणिनि शाला तिलोरा–अजमेर), राजाराम दीक्षित (प्राध्यापक, अतर्रा), सत्यानन्द (आचार्य, गुरुकुल देवरिया) और विद्यानन्द (अध्यापक, देवरिया)। पुराने छात्रों में धर्मानन्द, प्रशस्यमित्र, दीनदयालु, स्वतन्त्रदेव, नागेन्द्र और विपिन भी अध्ययन करते रहे।

४.२ विरजानन्दाश्रम-पाणिनि महाविद्यालय-बहालगढ (सन् १९७०-१९९९)

जून सन् १९७० में विरजानन्द आश्रम – पाणिनि महाविद्यालय एवं उसके सञ्चालक रामलाल कपूर ट्रस्ट का स्थानान्तरण बहालगढ़ (सोनीपत, हरयाणा) में किया गया । ट्रस्ट ने यहां अपने परिसर में **'जिज्ञासु-स्मृति-भवन'** का निर्माण किया। आरम्भिक वर्षों में श्रद्धेय पं० श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक ने छात्रों को निरुक्त, दर्शन आदि विषयों का अध्ययन कराया । मुख्य रूप से अध्यापन और आश्रम की व्यवस्था का उत्तरदायित्व आचार्य श्री विजयपाल जी विद्यावारिधि के ऊपर ही रहा । विद्यालय के पाठ्यक्रम के सभी शास्त्रों का अध्ययन निर्विघ्नता से सन् १९९९ के अन्त तक चलत रहा ।

विरजानन्द आश्रम - बहालगढ़

पिछले उनत्तीस वर्षों में यहाँ अध्ययन करने वाले प्रमुख छात्रों के नाम हैं — धर्मदीप, प्रशान्त (दोनों महाराष्ट्र), गणपति(अध्यापक, कर्णाटक), चन्द्रदत्त (बदायूँ, उ० प्र०), शीलभद्र (अध्यापक, चम्बा), बलदेव (स्वामी वेदानन्द, उत्तर काशी), अपरोक्षानन्द (गंगोत्री), ओंकार (गुरुकुल, कुरुक्षेत्र), गौतम (अध्यापक, मुम्बई), रणधीर (भिवानी), देवदत्त (वैद्य, बिहार) परिमल (अध्यापक, लोना वाला), वेदमित्र (अध्यापक, बाड़मेर, राजस्थान), द्विजराज (मध्यप्रदेश), जगद्देव (आचार्य, गुरुकुल होशंगाबाद), विद्याव्रत (दिल्ली), सत्यप्रकाश (बिहार), कृष्णदेव (हरयाणा), वेदवीर (आन्ध्रप्रदेश), बलराम (बिहार), बालेश्वर (अध्यापक, झज्झर), दीपक (मारीशस), प्रदीप (अध्यापक, पाणिनि महाविद्यालय, रेवली), नरेशचन्द्र (बदायूँ, उ० प्र०), लक्ष्मणदेव (आ० प्र०), जयकिशोर (बिहार), श्रीओम्, द्विजेन्द्र (दोनों हरि०), कमलाकान्त (गढ़वाल), सुधांशु (गोरखपुर), बद्रीदास (बिहार), परमदेव (आचार्य, सांगोपांग वेदविद्यापीठ, उ० काशी), चारुदत्त (मारीशस), देवदत्त (आ० प्र०), मोहनप्रसाद, उदयकुमार, सुधांशु मित्र, (तीनों, बिहार), वेदप्रिय (स्व०,), हरिप्रसाद (दोनों आ० प्र०), ब्र० कृष्णदेव (स्वामी सम्पूर्णानन्द, करनाल) ।

५.१ विरजानन्दाश्रम, पाणिनि महाविद्यालय-रेवली
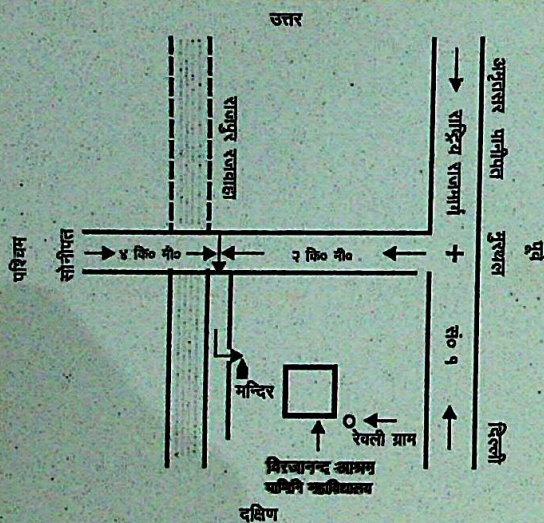
विरजानन्दाश्रम, पाणिनि महाविद्यालय का वर्तमान परिसर दिल्ली से अमृतसर जाने वाले राष्ट्रिय राजमार्ग सं० १ पर स्थित मुरथल चौक से सोनीपत जाने वाले मार्ग पर दो कि० मी० के अनन्तर रेवली ग्राम के पश्चिम में स्थित राजपुर रजवाहा के साथ, सोनीपत की सड़क से दक्षिण दिशा में लगभग एक फर्लांग की दूरी पर विद्यमान है । ग्राम व नगर के कोलाहल एवं प्रदूषण से रहित, शान्त, सुरम्य, स्वास्थ्यप्रद एवं प्रकृति के हरे भरे बगीचे के मध्य में स्थित है ।

विरजानन्द आश्रम रेवली
(निर्माणाधीन भवन)

इस समय पाणिनि महाविद्यालय रेवली में ५४ छात्र विभिन्न श्रेणियों में अध्ययन कर रहे हैं। जिनमें से २२ छात्र विरजानन्द आश्रम में स्थायी निवास करते हैं।

विभिन्न श्रेणियों में छात्रों की संख्या इस प्रकार है—

१	विद्याधिकारी	१०
२	व्याकरणोपाध्याय (प्रथम खण्ड)	१३
३	व्याकरणोपाध्याय (द्वितीय खण्ड)	११

४.	व्याकरणोपाध्याय	(तृतीय खण्ड)	१०
५.	व्याकरणाचार्य	(प्रथम खण्ड)	५
६.	व्याकरणाचार्य	(द्वितीय खण्ड)	०
७.	निरुक्ताचार्य		०
८.	वाचस्पति		५
			५४

सुखार्थी चेत् त्यजेद्विद्यां विद्यार्थी चेत् त्यजेत् सुखम्।
सुखार्थिनः कुतो विद्या कुतो विद्यार्थिनः सुखम्।।

जिसे सुख की अभिलाषा हो, उसे विद्याप्राप्ति की आशा छोड़ देनी चाहिए और जिसे विद्या–प्राप्ति की इच्छा हो उसे सुख को तिलाञ्जलि दे देनी चाहिए। क्योंकि सुख चाहने वाले को विद्या की प्राप्ति नहीं हो सकती और विद्यार्थी को सुख नहीं मिल सकता।

कामं क्रोधं तथा लोभं स्वादं शृंगारकौतुके।
अतिनिद्राऽतिसेवे च विद्यार्थी ह्यष्ट वर्जयेत्।।

विद्यार्थी को चाहिये कि वह काम, क्रोध, लोभ, स्वाद, शृंगार, खेल–तमाशे, बहुत अधिक सोना और अत्यधिक सेवा करना–इन आठ बातों को त्याग दे।

-आचार्य चाणक्य

पाणिनि महाविद्यालय

प्रवेश :

१. आन्तरिक और बाह्य–दो प्रकार के छात्र इस महाविद्यालय में प्रविष्ट किये जाते हैं । बाह्य छात्र प्रतिदिन नियत समय पर पाठ पढ़ने के लिये आते हैं। आन्तरिक छात्र स्थायी रूप से 'विरजानन्द आश्रम' में रहते हैं।

२. लगभग सोलह वर्ष या अधिक वयः के छात्र प्रविष्ट किये जाते हैं।

३. प्रवेश के समय छात्र की शैक्षणिक योग्यता दसवीं श्रेणी के समकक्ष या इससे अधिक होनी चाहिए ।

४. साधारणतः अविवाहित छात्र ही प्रविष्ट किये जाते हैं । उत्कट इच्छावाले विवाहित छात्र भी प्रविष्ट किये जा सकते हैं, परन्तु उन्हें आश्रम में स्थान नहीं दिया जाता है । वे बाह्य छात्र के रूप में अध्ययन कर सकते हैं ।

५. छात्राएं भी प्रविष्ट हो सकती हैं, परन्तु उन्हें आश्रम में स्थान नहीं दिया जाता है ।

६. आर्यभाषा (हिन्दी) का अच्छा ज्ञान आवश्यक है ।

नियम :

१. अनुशासन और सदाचार का पालन अनिवार्य है ।

२. रहन–सहन, वस्त्र आदि यथासम्भव सादा एवं भारतीय परम्पराओं के अनुरूप रखे जाते हैं ।

३. समय–समय पर होने वाली पाठ्य–परीक्षाएँ अनिवार्य हैं । इनमें विफल होने पर छात्र को संस्था छोड़ देने का परामर्श दिया जाता है ।

४. अध्यापन निःशुल्क होता है ।

५. रविवार अनध्याय होता है । वार्षिक अवकाश की परम्परा नहीं है ।

६. अध्यापन गुरु–शिष्य–प्रशिष्य पद्धति से होता है ।

७. प्रत्येक छात्र से पुस्तकालय का यथेष्ट लाभ उठाने की अपेक्षा जाती है ।

८. योग्य छात्रों को छात्रवृत्ति दी जाती है ।

विरजानन्द - आश्रम

१. साधारणतः स्थान रिक्त होने पर प्रत्येक छात्र को आश्रम में स्थान दिया जाता है ।

२. आवास, बिजली, पानी आदि की सुविधाएं सभी छात्रों को निःशुल्क प्राप्त हैं ।

३. आश्रम सम्बन्धी सामूहिक कार्य पर्यायानुसार छात्र ही करते हैं ।

४. प्रतिदिन प्रातः सन्ध्या – अग्निहोत्र में प्रत्येक छात्र उपस्थित रहता है। रुग्ण या अन्य कार्य में लगा छात्र अपवाद समझा जाता है ।

५. यथासम्भव सादा भोजन – वस्त्र आदि व्यवहृत होता है ।

६. छात्र अपने वस्त्रों–पात्रों–कमरों आदि की सफाई स्वयं करते हैं ।

७. शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिए यथेष्ट परामर्श दिया जाता है।

परीक्षाएं

१. शासकीय मान्यता प्राप्त परीक्षाओं की व्यवस्था महाविद्यालय की ओर से नहीं है ।

२. यदि छात्र चाहे तो व्याकरणोपाध्याय के पश्चात् निजीरूप से शासकीय मान्यता प्राप्त परीक्षाएं दे सकता है ।

३. अपने विषय की सामयिक परीक्षाएं अनिवार्य हैं ।

पुस्तकालय - पत्रिकाएं

पाणिनि महाविद्यालय में स्थित पुस्तकालय में दस हजार से अधिक उत्कृष्ट पुस्तकें संगृहीत की गई हैं। छात्र इनसे यथेष्ट लाभ उठाते हैं। पुस्तकालय की पुस्तकें विद्यालय के परिसर से बाहर ले जाने पर प्रतिबन्ध है। अतः बाह्य छात्र पुस्तकें प्राप्त करके, पढ़ कर जाते समय उत्तरदायी व्यक्ति को सौंप जाते हैं और अगले दिन पुनः लेकर पढ़ते हैं। वैदिक वाङ्मय, संस्कृत व्याकरण और वैदिक दर्शन सम्बन्धी पुस्तकों का दुर्लभ संग्रह यहां विद्यमान है । इतिहास, साहित्य, आयुर्वेद, वैदिक सिद्धान्त और सन्दर्भ वाङ्मय की भी सहस्राधिक पुस्तकें वर्तमान हैं। आधुनिक शोधपूर्ण ग्रन्थों को यथासम्भव सङ्गृहीत करने का प्रयास किया जाता है।

पुस्तकें मुख्यतः संस्कृत हिन्दी और अंग्रेजी की हैं। इन पुस्तकों के अतिरिक्त लगभग पचास पत्रिकायें यहां पर आती हैं, जिनमें संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित साप्ताहिक पाक्षिक तथा मासिक पत्र–पत्रिकायें सम्मिलित हैं। चार शोध पत्रिकाओं की व्यवस्था भी नियमित रूप से चल रही है।

पाठ्यक्रम

सम्पूर्ण पाठ्य वाङ्मय पांच श्रेणियों में विभाजित किया गया है। आगे उसका क्रम प्रदर्शित किया गया है, काल–निर्देश नहीं है। उपाध्याय (व्याकरण) श्रेणी को तीन और आचार्य (व्याकरण) को दो खण्डों में विभक्त किया गया है। योग्य छात्रों को एक से अधिक श्रेणी में अध्ययन करने की अनुमति भी दी जाती है। पाठ्यक्रम में निर्दिष्ट 'सिद्धान्त' के अध्यापन की व्यवस्था सम्प्रति नहीं है, तथापि निर्दिष्ट विषय का ज्ञान स्वाध्याय द्वारा किया जाना अपेक्षित समझा जाता है। वाचस्पति श्रेणी में आधुनिक शोध तथा ग्रन्थ–सम्पादन का क्रियात्मक प्रशिक्षण दिया जाता है।

१. विद्याधिकारी

क. अपेक्ष्य–हिन्दी भाषा का प्रौढ़ ज्ञान।

ख. कण्ठस्थीकरण–पाणिनीय अष्टाध्यायी और धातुपाठ।

ग. संस्कृतसाहित्य–संस्कृतवाक्यप्रबोध के समस्तर की पुस्तकें।

घ. अनुवाद।

ङ सिद्धान्त–व्यवहारभानु, आर्योद्देश्यरत्नमाला, सामान्य कर्मकाण्ड, सत्यार्थप्रकाश (साधारण)।

२.उपाध्याय (व्याकरण)

प्रथम खण्ड

क अष्टाध्यायी (प्रथमावृत्ति) १–५ अध्याय।

ख मूल–पाणिनीय शिक्षा–अष्टाध्यायी–धातुपाठ।

ग संस्कृतसाहित्य–हितोपदेश या उसके समस्तर की पुस्तकें।

घ. अनुवाद।

ङ. सिद्धान्त – सत्यार्थप्रकाश के २, ५, १० समुल्लास।

द्वितीय खण्ड

क. अष्टाध्यायी (प्रथमावृत्ति) ६–८ अध्याय।

ख. तिङन्तप्रक्रिया–सहायक ग्रन्थ–माधवीया धातुवृत्ति।

ग. सुबन्तप्रक्रिया–सहायक ग्रन्थ–नामिक। उणादिसूत्र–फिट्सूत्र – लिंगानुशासनसूत्र।

घ. अनुवाद, संस्कृतसाहित्य – पञ्चतन्त्र या तत्समस्तर ग्रन्थ ।

ङ. सिद्धान्त – सत्यार्थप्रकाश के १,३,४,६ समुल्लास ।

तृतीय खण्ड

क. परिभाषा–व्याख्या, सहायक ग्रन्थ–पारिभाषिक (परिभाषा–संग्रह अपेक्षित)

ख. अष्टाध्यायी द्वितीयावृत्ति – काशिका (न्यास – पदमञ्जरी अपेक्षित)।

ग. अनुवाद, संस्कृतसाहित्य – चरक, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के समस्तर ग्रन्थ ।

घ. प्रस्ताव ।

ङ. सिद्धान्त – सत्यार्थप्रकाश के ७–६ समुल्लास ।

३. आचार्य (व्याकरण)

प्रथम खण्ड

क. महाभाष्य १–४ अध्याय (प्रदीप – उद्द्योत अपेक्षित) ।

ख. अनुवाद, संस्कृतसाहित्य – चरक, सुश्रुत, अर्थशास्त्र के समस्तर ग्रन्थ।

ग. प्रस्ताव ।

घ. सिद्धान्त – संस्कारविधि, ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन ।

द्वितीय खण्ड

[illegible] महाभाष्य ५–८ अध्याय (पूर्ववत्), व्याकरण–दर्शन (परिचय), व्याकरण शास्त्र का इतिहास (परिचय) ।

[illegible] अनुवाद, संस्कृतसाहित्य – वाल्मीकि रामायण, महाभारत, मनुस्मृति,

नीतिग्रन्थ ।

ग. प्रस्ताव ।

घ. सिद्धान्त – ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ।

४. आचार्य (निरुक्त)

क. निघण्टु – निरुक्त ।

ख. बृहद्देवता, कात्यायनीय–ऋक्सर्वानुक्रमणी, ऋक्प्रातिशाख्य ।

ग. निबन्ध ।

घ. सिद्धान्त – वाङ्मय–इतिहास (वैदिक वाङ्मय का इतिहास, वैदिक इतिहासार्थ निर्णय) ।

५. वाचस्पति

क. कल्प–श्रौत (कात्यायन) – गृह्य–धर्म सूत्र ।

ख. ज्यौतिष – सूर्यसिद्धान्त (उपपत्तिरहित) ।

ग. छन्दःसूत्र – पिंगल (वैदिक छन्द)

घ. उपांग – न्याय – वात्स्यायनभाष्य, वैशेषिक – प्रशस्तपादभाष्य, साङ्ख्य–प्रवचनभाष्य, योग – व्यासभाष्य ।

ङ. तैत्तिरीयसंहिता (परिचय) – पूर्व मीमांसा ।

च. एकादश उपनिषद् (परिचय) – उत्तर मीमांसा (वेदान्त) ।

छ. शतपथ–ऐतरेय–पञ्चविंश (परिचय) ।

संस्थापक एवं आद्य आचार्य
राष्ट्रिय पण्डित
पदवाक्यप्रमाणज्ञ पूज्य पं० श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु

परिचय

सन् १८९२ सन् १९६४
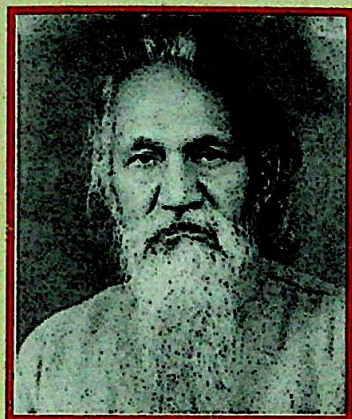
१४ अक्तूबर, सन् १८९२ के दिन ग्राम मल्लूपोता (थाना–बंगा, जि० जालन्धर, पञ्जाब) ग्राम में आपका जन्म हुआ । आपका प्रारम्भिक अध्ययन उर्दू से हुआ । संस्कृत के प्रेमी होने के कारण बाद में संस्कृत–विषयका भी अध्ययन आरम्भ किया । सभी विषयों में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होते हुए आपने १०वीं कक्षा पर्यन्त अध्ययन किया । सत्यार्थप्रकाश के स्वाध्याय से संस्कृत पढ़ने विशेषतया महर्षि दयानन्द द्वारा लिखित आर्ष–प्रणाली को पढ़ने की उत्कट इच्छा हुई । फलतः ५जून, सन् १९१२ को आपने गृह–त्याग किया और आजीवन अज्ञात ही रहे।

शैक्षणिक कार्य

आर्ष–ग्रन्थों को पढ़ने का दृढ़ संकल्प लेकर आप काशी के सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० श्री काशीनाथ जी के शिष्य पूज्य स्वामी श्री पूर्णानन्द जी सरस्वती के श्रीचरणों में उपस्थित हुये । उनके सान्निध्य में महती तपस्या के साथ लगभग छः वर्ष (जून १९१२ से सितम्बर १९१८) तक संस्कृत–व्याकरण, उपनिषदादि और महर्षि दयानन्द के द्वारा प्रणीत ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया । तत्पश्चात् १९[illegible] प्रारम्भ में साधु–आश्रम–हरदुआगंज (पुल काली नदी, अलीगढ़) में वीतराग स्वामी श्री सर्वदानन्द जी महाराज से विचार विमर्श कर **"विरजानन्द आश्रम"** की स्थापना की । यहां पूर्व से चलने वाली अनार्ष – पाठविधि (लघु–कौमुदी, सिद्धान्त – कौमुदी आदि) को समाप्त कर प्राच्य–प्रक्रिया से अध्यापन प्रारम्भ करके आर्षप्रणाली का उद्धार किया (इस कार्य का सम्पूर्ण विवरण विरजानन्द आश्रम के

परिचय के साथ आरम्भ में ही दिखाया गया है ।)

आप ने व्याकरणादि का अध्यापन कार्य करते हुए स्वामी श्री सर्वदानन्द जी से उपनिषद् ; महावैयाकरण पं० श्री देवनारायण जी तिवारी से सम्पूर्ण महाभाष्य ; पं० श्री ढुण्ढिराज जी शास्त्री, पं० श्री गिरीश जी शुक्ल और पं० श्री गोस्वामी दामोदर लाल जी से प्राचीन दर्शनों, म० म० पं० श्री चिन्नस्वामी जी शास्त्री, पं० श्री पट्टाभिराम जी शास्त्री से मीमांसा शास्त्र के सभी ग्रन्थ, महान् वैदिक विद्वान् पं० श्री रामभट्ट रराटे जी से श्रौत ग्रन्थों का गम्भीरता के साथ गहन अध्ययन किया । अन्य विद्वानों से भी शेष दर्शन, साहित्य, वाक्यपदीय, निरुक्त आदि भी काशी में ही पढ़ते रहे । वैदिक वाङ्मय तथा प्राचीन इतिहास के मर्मज्ञ पं० श्री भगवद्दत्त जी से अनुसन्धान का ज्ञान प्राप्त किया।

सामाजिक कार्य

उक्त वैदिक वाङ्मय का अध्ययन तथा अध्यापन करते–कराते हुए आपने सामाजिक कार्यों में भी पर्याप्त योगदान किया। तद्यथा–सन् १६२३–२४ में मलकानों की शुद्धि कार्य में, सन् १६२६ से २८ तक शुद्धि आन्दोलन में **'काशी-हिन्दू-शुद्धि-सभा'** के मन्त्री के रूप में अक्तूबर सन् १६४७ से फरवरी १६५० तक शुद्धि आदि कार्यों में भाग लेकर समाज की सेवा की और सन् १६३६ में हैदराबाद के सत्याग्रह में एवं सन् १६५७ में हिन्दी–रक्षा–आन्दोलन में अपने छात्रों को भेजा। इन कार्यों के अतिरिक्त सन् १६३१ में महात्मा श्री हंसराज जी की विशेष प्रेरणा से उन्हीं के सभापतित्व में पं० श्री विश्वबन्धु जी शास्त्री, पं० श्री [illegible] शास्त्री तथा पं० श्री चारुदेव जी शास्त्री से **''निरुक्त और वेद में [illegible]** [illegible] पर लाहौर में पांच दिन तक मौखिक शास्त्रार्थ किया और [illegible]रिणी सभा (अजमेर) सम्बन्धी अनेक कार्य करते हुये "देवतावाद" विषय [illegible] पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी के साथ कई मास तक लिखित [illegible] इलाहाबाद में आपने पं० जवाहरलाल नेहरू के विरुद्ध श्री प्रभुदत्त [illegible] पक्ष में चुनाव प्रचार भी किया। आपने **'रामलाल कपूर ट्रस्ट'** के प्रधान [illegible] आजीवन सुशोभित किया।

वैदिक वाङ्मय की सेवा

आपने सन् १९२१ से आजीवन (सन् १९९४ तक) वैदिक वाङ्मय की महती सेवा की। आप अष्टाध्यायी, महाभाष्य, निरुक्त, छन्द, मीमांसा, श्रौत, ब्राह्मण, वेदादि का अध्ययन, अध्यापन और अनुसन्धान आदि में अथक् परिश्रम करते रहे। **"वेदवाणी"** मासिक पत्रिका का सम्पदान करते हुए अनेकों अनुसन्धानात्मक लेख लिखकर पाठकों को लाभान्वित करते रहे । काशी निवास काल में भर्तृहरि कृत महाभाष्य–दीपिका का सम्पदान और अनेकों महत्वपूर्ण प्राचीन ग्रन्थों के हस्तलेखों का संग्रह किया । आप ने स्वयं भी अनेक ग्रन्थों का प्रणयन और सम्पादन किया है । यथा –

१ यजुर्वेद–भाष्य–विवरणम् (दो भाग) ।

२ अष्टाध्यायीसूत्रपाठः (सम्पादन) ।

३ अष्टाध्यायी–भाष्यम् (प्रथमावृत्तिः) ।

४ संस्कृत पठन–पाठन की अनुभूत सरलतम विधि (दो भाग)।

५ वेद और निरुक्त ।

६ निरुक्तकार और वेद में इतिहास ।

७ देवापि और शान्तनु के आख्यान का वास्तविक स्वरूप ।

राष्ट्रिय पण्डित

पूज्य गुरुवर राष्ट्रपति - पुरस्कार के पश्चात् अमृतसर में
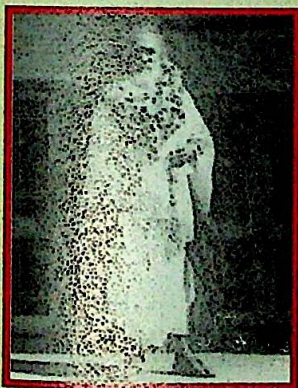
आपकी बहुमुखी–प्रतिभा–सम्पन्नता को देखते हुये माननीय राष्ट्रपति सर्वपल्ली श्री राधाकृष्णन् जी ने आपको सन् १९६३ में **"राष्ट्रिय पण्डित"** की उपाधि देते हुए राष्ट्रपति पुरस्कार प्रदान किया ।

शिष्य-वर्ग

विरजानन्द आश्रम तथा पाणिनि महाविद्यालय में संस्कृत एवं वैदिक वाङ्मय का अध्ययन करके विविध क्षेत्र में कार्य–रत आपके शिष्यों की शृंखला बहुत लम्बी है।

निदर्शनार्थ कुछ विद्वानों के नाम प्रस्तुत किये जाते हैं –

१. स्व० महामहोपाध्याय पं० श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक ।
२. स्व० पं० श्री याज्ञवल्क्य (गुरु) जी ।
३. स्व० पं० श्री इन्द्रदेव जी आचार्य ।
४. स्व० पं० श्री भद्रसेन जी आचार्य ।
५. स्व० पं० श्री सत्यदेव जी वासिष्ठ आयुर्वेदाचार्य ।
६. पं० श्री धर्मदेव जी निरुक्ताचार्य ।
७. स्व० पं० श्री वाचस्पति जी आचार्य ।
८. स्व० पं० श्री ज्योतिःस्वरूप जी आचार्य ।
६. वैद्य पं० श्री भीमसेन जी शास्त्री ।
१०. स्व० वैद्य श्री यशपाल जी ।
११. पं० श्री वाचस्पति जी ।
१२. स्व० डॉ० श्री चन्द्रकान्त जी मुदालियर ।
१३. स्व० डॉ० श्री देवप्रकाश जी पांतञ्जल ।
१४. डॉ० श्री मुनीश्वरदेव जी ।
१५. स्व० डॉ० श्री कपिलदेव जी ।
१६. डॉ० पं० श्री वीरेन्द्र जी शर्मा ।
१७. स्व० पं० श्री ओम्प्रकाश जी व्याकरणाचार्य ।
१८. डॉ० पं० श्री सत्यपाल जी ।
१६. पं० श्री राजेन्द्र कुमार जी आचार्य ।
२०. स्व० पं० श्री सत्यप्रिय जी ।
२१. पं० श्री वेदव्रत जी प्रज्ञाचक्षु ।
२२. स्व० पं० श्री शंकरदेव जी (हैदराबाद) ।
२३. स्व० पं० श्री रामचन्द्र जी ।
२४. वैद्य श्री रंगाचार्य जी ।
२५. स्व० श्री रणवीर जी कपूर ।
२६. स्व० पं० श्री विद्याभास्कर जी ।

२७. स्व० स्वामी श्री मानानन्द जी आचार्य (पं० ब्रह्मदेव जी) ।

२८. आचार्य श्री विजयपाल जी विद्यावारिधि ।

२९. श्री जितेन्द्र जी ।

३०. श्री अमर सिंह जी ।

३१. पं० श्री व्रतपाल जी सिद्धान्त शास्त्री ।

३२. स्व० पं० श्री खेमचन्द जी ।

३३. डॉ० श्री सुद्युम्न जी आचार्य ।

३४. पं० श्री धर्मानन्द जी ।

३५. पं० श्री याज्ञवल्क्य जी (ब्र० विष्णुचैतन्य जी) ।

छात्रावर्ग

आचार्यवर श्री जिज्ञासु जी से अनेक छात्राओं ने भी शास्त्रों का गम्भीर अध्ययन किया था, उनमें से प्रमुख ये हैं –

१. श्रीमती श्रेष्ठा जी मेहरा ।

२. श्रीमती सत्या जी पथरिया ।

३. सुश्री उमानन्दन जी सरस्वती ।

४. सुश्री डॉ० पुष्पा जी आचार्या ।

५. स्व० सुश्री डॉ० प्रज्ञादेवी जी आचार्या ।

६. सुश्री मेधादेवी जी आचार्या ।

७. स्व० सुश्री शान्ति जी आचार्या ।

आचार्यवर श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु के निधन के उपरान्त [illegible] उनकी प्रज्वलित ज्योति निरन्तर प्रकाश फैला रही है । पाणिनि महावि[illegible]से **"जिज्ञासु-ज्ञान-ज्योति"** को लेकर निकलने वाले जिज्ञासु–प्रशिष्यों की श्रृंखल[illegible] लम्बी होती जा रही है । जिसकी कुछ कड़ियां आगे आचार्य श्री विजय[illegible] विद्यावारिधि के परिचय में दिखाई जायेंगी ।

राष्ट्रिय पण्डित

महामहोपाध्याय पं० श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक

परिचय

सन् १९०९ सन् १९९४

२२ सितम्बर, १९०९ को विरकच्यावास (विरञ्च्यावास) (अजयमेरु, राजस्थान) में आपका जन्म हुआ । आपकी प्रारम्भिक शिक्षा पांचवीं कक्षा तक हुई थी । तदुपरान्त ३ सितम्बर, १९२१ को 'विरजानन्द आश्रम' (हरदुआगंज, अलीगढ़) में प्रविष्ट होकर पदवाक्यप्रमाणज्ञ गुरुवर पं० श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु के अन्तेवासी बने । उक्त आश्रम में १४ वर्ष (सन् १९२१ से १९३५) तक महती धीरता एवं गम्भीरता के साथ वैदिक वाङ्मय का अध्ययन किया । तद्यथा – गुरुवर पं० श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु, पं० श्री शंकरदेव जी एवं महावैयाकरण पं० श्री देवनारायण जी तिवारी से काशिका (द्वितीयावृत्ति) पर्यन्त अध्ययन कर पं० श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु से महाभाष्य, निरुक्त (दुर्ग तथा स्कन्द स्वामी टीका सहित) एवं अन्य सैद्धान्तिक ग्रन्थों का, म० म० पं० श्री चिन्नस्वामी जी शास्त्री और पं० श्री पट्टाभिराम जी शास्त्री से सम्पूर्ण पूर्वमीमांसाशास्त्रों का, पं० श्री ढुण्ढिराज जी शास्त्री से न्याय, वैशेषिक के अनेक प्राचीन दुष्कर ग्रन्थों का, पं० श्री भगवत् प्रसाद जी मिश्र वेदाचार्य से कात्यायन श्रौतसूत्रादि का अध्ययन किया। कतिपय अन्य विषयों का भी विभिन्न गुरुजनों से अध्ययन किया। पं० श्री भगवद्दत्त जी रिसर्चस्कालर के सान्निध्य में भारतीय प्राचीन इतिहास तथा अनुसन्धान–कार्य की शिक्षा अर्जित की । इस वाङ्मय के अध्ययनो[illegible] २१ अप्रैल १९३६ को विरजानन्द आश्रम (लाहौर) के प्राङ्गण में अनेकों [illegible]न्य प्रतिष्ठित विद्वानों के सम्मुख आपका विधिवत् समावर्तन संस्कार (स्नातक [illegible]) सम्पन्न हुआ । तत् पश्चात् २७ वर्ष की अवस्था (२ जून, १९३६) में सुश्री [illegible] देवी जी के साथ आपका विवाह हुआ ।

शैक्षणिक कार्य

आप सन् १९३६ से जीवन–सन्ध्या (सन् १९९४) की वेला तक अनेकों स्थानों पर स्वतन्त्ररूप से अथवा किसी संस्था के साथ सम्बद्ध होकर अध्यापन तथा शोधकार्य करते रहे । यथा–विरजानन्द आश्रम (लाहौर, वाराणसी, बहालगढ़), महर्षि दयानन्द स्मारक महाविद्यालय (टंकारा), पाणिनीय सान्ध्य संस्कृत महाविद्यालय – भुवनेश्वर (उड़ीसा प्रशासन द्वारा सञ्चालित) आदि । इनके अतिरिक्त दिल्ली, अजमेर आदि स्थानों में स्वतन्त्ररूप से भी अध्यापन एवं शोध–कार्य किया । आपने स्वतंन्त्ररूप से 'भारतीय–प्राच्यविद्या–प्रतिष्ठान' की स्थापना की और 'रामलाल कपूर ट्रस्ट', 'अनुसन्धान विभाग' (टंकारा) आदि संस्थाओं के अध्यक्षपद को भी अलंकृत किया ।

पं॰ श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक को सम्पूर्णानन्द वि॰ वि॰ के तात्कालिक कुलपति डॉ॰ श्री वी॰ वी॰ वेंकटाचलम् जी "महामहोपाध्याय" की उपाधि प्रदान करते हुए ।

शोध-कार्य

आपने संस्कृत–वाङ्मय, विशेषकर वेद और व्याकरणविषय में अनेकानेक शोधपूर्ण लेख एवं ग्रन्थों (संस्कृत, हिन्दी) की रचना की तथा महत्त्वपूर्ण विविध संस्कृत ग्रन्थों का सम्पादन भी किया । आपके मौलिक शोध–पूर्ण प्रमुख ग्रन्थ इस प्रकार हैं –

१. संस्कृत–व्याकरणशास्त्र का इतिहास (दो भाग) ।

वैदिक–स्वर–मीमांसा ।

वैदिक–छन्दोमीमांसा ।

श्रौत–यज्ञ–मीमांसा ।

ऋग्वेद की ऋक्संख्या ।

छन्दःशास्त्र का इतिहास (अप्रकाशित) ।

शिक्षा–शास्त्र का इतिहास (अप्रकाशित) ।

निरुक्त–शास्त्र का इतिहास (अप्रकाशित) ।

सम्पादित ग्रन्थ

१. निरुक्त–समुच्चयः ।
२. भागवृत्ति–संकलनम् ।
३. दशपाद्युणादिवृत्तिः (दो भाग) ।
४. शिक्षा – सूत्राणि ।
५. क्षीर–तरंगिणी ।
६. दैवम्, पुरुषकारवार्त्तिकोपेतम् ।
७. काशकृत्स्न –धातुपाठः ।
८. माध्यन्दिन–पदपाठः ।
९. महाभाष्यम् (हिन्दी व्याख्या सहित, दो अध्याय पर्यन्त) ।
१०. मीमांसा–शाबर–भाष्यम् (हिन्दी व्याख्या सहित) ।
११. ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन (चार भाग) ।

विशिष्ट सम्मान एवं पुरस्कार

१. राजस्थान राज्य के संस्कृत विभाग ने वेद और व्याकरण शास्त्र सम्बन्धी शोधकार्य पर सन् १९९३ में ३०००/– रुपये से आपको सम्मानित किया ।

पं० श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक को डॉ० श्री विद्यानिवास जी मिश्र "विश्वभारती" पुरस्कार प्रदान करते हुए

२. भारत के राष्ट्रपति (कार्यवाहक) महामहिम बी० डी० जत्ती ने संस्कृत भाषा की उन्नति और विस्तार तथा साहित्यिक सेवा के लिए सन् १९७७ में 'राष्ट्रिय-पण्डित' की उपाधि से आपको सम्मानित किया ।

३. उत्तरप्रदेश शासन ने व्याकरण शास्त्र सम्बन्धी विशिष्ट सेवा के लिए सन् १९७६ में १५०००/– रुपये से सम्मानित किया ।

४. उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी ने आप को **'विश्व भारती'** नामक पुरस्कार एवं एक लाख रुपये नगद से पुरस्कृत किया।

५. आर्यसमाज सान्ताक्रुज मुम्बई ने ७५ सहस्र रुपये से सम्मानित किया।

इस प्रकार और भी अन्य पांच संस्थाओं ने आपको पुरस्कृत किया तथा उत्तर प्रदेश शासन के द्वारा आपके विशिष्ट नौ ग्रन्थों पर भी सम्मान मिला।

आलस्यं मदमोहौ च चापल्यं गोष्ठिरेव च ।
स्तब्धता चाभिमानित्वं तथात्यागित्वमेव च ।
एते वै सप्त दोषाः स्युः सदा विद्यार्थिनां मताः ।।

आलस्य करना, मदकारी पदार्थों का सेवन, घर आदि में मोह रखना, चपलता=एकाग्रचिन न होना, व्यर्थ की बात में समय बिताना, उद्धतपना या जड़ता और लालची होना, ये सात दोष विद्यार्थियों के माने गये हैं अर्थात् इन दुर्गुणों से युक्त को विद्या प्राप्त नहीं होती।

-महात्मा विदुर

वर्तमान आचार्य एवं सञ्चालक

आचार्य श्री विजयपाल जी विद्यावारिधि

(संक्षिप्त परिचय)

आपने सन् १९५१ ई० में विज्ञान–स्नातक की उपाधि 'गवर्नमेण्ट एग्रीकल्चर कालेज (कानपुर) {वर्तमान में चन्द्रशेखर आजाद कृषि विश्वविद्यालय}' से प्राप्त करने के उपरान्त पूज्य स्वामी श्री ब्रह्मानन्द जी दण्डी महाराज की सत्प्रेरणा से उन्हीं के द्वारा स्थापित 'आर्ष–गुरुकुल–यज्ञतीर्थ' (एटा) में आचार्य श्री ज्योतिःस्वरूप जी के सान्निध्य में वेदांग–व्याकरण का अध्ययन आरम्भ किया। तदनन्तर २ अक्तूबर, १९५२ में श्रद्धेयचरण पदवाक्यप्रमाणज्ञ पं॰ श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु का शिष्यत्व ग्रहण किया। उनके सामीप्य में आपने शिक्षा, महाभाष्य पर्यन्त सम्पूर्ण व्याकरणशास्त्र एवं निरुक्त, छन्दः, कल्प, मीमांसा आदि का गहन अध्ययन किया और वाराणसी (काशी) में ही रहते हुये अन्य गणमान्य विद्वानों (गुरुओं) से भिन्न–भिन्न विषयों को २० वर्ष पर्यन्त धीरता के साथ वैदिक वाङ्मय का गम्भीर अध्ययन करते रहे। जैसे कि पं० श्री ढुण्ढिराज जी से न्याय, वैशेषिक, साङ्ख्य, योग दर्शन ; स्वामी श्री शंकरानन्द जी (पश्चात्–सुमेरु पीठाधीश्वर) से वेदान्त–दर्शन ; पं० श्री सीताराम जी झा से ज्यौतिष (सूर्य–सिद्धान्त), पं० श्री काशीनाथ जी से आयुर्वेद, पं० श्री रामप्रसाद जी त्रिपाठी से वाक्यपदीय एवं वैयाकरण–भूषण–सार, डॉ० श्री लक्ष्मी नारायण जी तिवारी से बौद्ध ग्रन्थ ([illegible] भाषा में)।

उक्त स्वकीय अध्ययन के साथ–साथ आप 'पाणिनि [illegible]' में व्याकरणादि का अध्यापन तथा अनुसन्धान (शोध) आदि कार्य भी करते [illegible] इन सभी कार्यों का सञ्चालन करते हुये आपने आयुर्वेद महासम्मेलन की आ[illegible]र्य परीक्षा द्वितीय श्रेणी में और 'सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय' की शा[illegible] तथा व्याकरणाचार्य परीक्षाएं भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और **"अष्टाध्यायीशु[illegible]ः-**

प्रातिशाख्ययोर्मतविमर्शः" का महत्त्वपूर्ण शोधप्रबन्ध प्रस्तुत कर पं० श्री रामप्रसाद जी त्रिपाठी के मार्गनिर्देशन में **'विद्यावारिधि'** की उपाधि प्राप्त की । इस अवधि में राष्ट्रिय–छात्रवृत्ति, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की फैलोशिप तथा स्वर्णपदक (शास्त्री) भी प्राप्त किया । पं० श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु के निधन (सन् १६६४) के पश्चात् म० म० पं० श्री युधिष्ठिर जी मीमांसक के साथ मिलकर पाणिनि महाविद्यालय में अध्यापन, शोध आदि कार्य करते रहे हैं। म० म० पं० श्री यु० मी० जी के दिवंगत (सन् १६६४) होने पर सम्पूर्ण कार्य (यथा–अध्यापन, सम्पादन, शोध एवं विरजानन्द आश्रम की व्यवस्था आदि) पूर्व की भांति अनवरत रूप से अद्यावधि चला रहे हैं । इसके अतिरिक्त दिल्ली, रोहतक, कुरुक्षेत्र आदि के विश्वविद्यालयों से वेद तथा व्याकरण के विषय में शोध करने वाले छात्र व छात्राओं को यथेष्ट सहायता एवं मार्गदर्शन भी करते हैं । इस प्रकार आप ने विगत ४० वर्षों से वेद, वेदांग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष), वेदोपाङ्गों (साङ्ख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदान्त) का अध्यापन श्रद्धा, निष्ठा अपि च अधिकारपूर्वक निस्पृहभाव से अविराम कराते हुए दुर्लभ प्राचीन वैदिक ग्रन्थों का सम्पादन व व्याख्या कर वैदिक सारस्वत महायज्ञ में महान् योगदान किया है।

आचार्य श्री विजयपाल जी विद्यावारिधि

आपके द्वारा लिखित, व्याख्यात, सम्पादित व संशोधित ग्रन्थ–

१. अष्टाध्यायी[illegible]यजुःप्रातिशाख्ययोर्मतविमर्शः ।

२. गोपथ–ब्रा[illegible] (मूलमात्रम्) ।

३. कात्यायनी[illegible]क्सर्वानुक्रमणी (षड्गुरुशिष्यभाष्यसहिता) ।

४. ऋग्वेदानु[illegible] ।

५. निरुक्त–[illegible]वार्त्तिकम् ।

६. पिंगलछन्द[illegible]म् (पिंगलछन्दोविचितिभाष्यसमुपेतम्) ।

७. बौधायन–श्रौतसूत्रम्। (भवस्वामिसायणभाष्ययुतम्) भागद्वयम्।

८. काशिका (जयादित्य–वामन–विरचिता)।

९. निघण्टु–निर्वचनम् (देवराजयज्वकृतम्)।

१०. माधवीया –धातुवृत्तिः (सम्पाद्यमाना)।

शिष्य-वृन्द

आप **'जिज्ञासु-ज्ञान-ज्योति'** को प्रज्वलित रखते हुये पूज्य गुरुवर के सदृश ही वैदिक–वङ्मय का अध्यापन कार्य कर रहे हैं। आपके सान्निध्य में अधीत योग्य स्नातक विविध कार्य क्षेत्र में संलग्न हैं। आपके प्रमुख शिष्य निम्न प्रकार हैं–

१. डॉ० श्री प्रशस्यमित्र जी शास्त्री।

२. डॉ० श्री धर्मवीर जी विद्यावारिधि।

३. डॉ० श्री सोमदेव जी शास्त्री।

४. डॉ० श्री राजाराम जी दीक्षित।

५. महात्मा श्री स्वतन्त्रदेव जी।

६. पं० श्री धर्मदीप जी।

७. पं० श्री प्रशान्तकुमार जी।

८. पं० श्री ओंकार जी शास्त्री।

९. स्वामी श्री अपरोक्षानन्द जी।

१०. स्वा० श्री वेदानन्द जी (पं० श्री बलदेव जी)।

११. आचार्य श्री जगद्देव जी नैष्ठिक।

१२. श्री रणधीर जी।

१३. वैद्य श्री देवदत्त जी।

१४. पं० श्री गणपति जी शर्मा।

१५. पं० श्री चन्द्रदत्त जी शर्मा।

१६. पं० श्री परिमल देवनाथ जी।

१७. पं० श्री शीलभद्र जी।

१८. पं० श्री वेदमित्र जी।

१९. पं० श्री द्विजराज जी।

२०. श्री विद्याव्रत जी।

२१. श्री कृष्णदेव जी।

२२. श्री सत्यप्रकाश जी।

२३. श्री वेदवीर (श्रुतिशेखर) जी।

२४. श्री बलराम जी।

२५. श्री बालेश्वर जी।

२६. श्री दीपक जी।

२७. श्री प्रदीप कुमार जी शास्त्री।

२८. श्री नरेशचन्द्र जी।

२९. श्री लक्ष्मणदेव जी।

३०. श्री जयकिशोर जी।

३१. श्री ओम् जी।

३२. श्री द्विजेन्द्र जी।

३३. श्री देवदत्त जी।

३४. श्री परमदेव जी मीमांसक।

३५. श्री कमलाकान्त जी।

३६. श्री बद्रीदास जी।

३७. श्री चारुदत्त जी।

भूषणम्

विप्राणां भूषणं वेदः । सर्वेषां भूषणं धर्मः ।
गुरुदेवब्राह्मणेषु भक्तिर्भूषणम् । भूषणानां भूषणं सविनया विद्या।

ब्राह्मणों का आभूषण वेद (ज्ञान) है । सब लोगों का आभूषण धर्म है । [illegible], देवता और ब्राह्मणों में भक्ति रखना मानवता का आभूषण है । सम[illegible] [illegible]भूषणों का आभूषण विनयसम्पन्न विद्या है ।

-आचार्य चाणक्य ।

सन् १८२४ वेदोद्धरक सन् १८८३
महर्षि दयानन्द सरस्वती

आर्ष-पाठविधि का महत्त्व

" महर्षि लोगों का आशय, जहाँ तक हो सके वहाँ तक, सुगम और जिस के ग्रहण में समय थोड़ा लगे, इस प्रकार का होता है और क्षुद्राशय लोगों की मनसा ऐसी होती है कि, जहाँ तक [illegible] वहाँ तक कठिन रचना करनी, जिस को बड़े परिश्रम से [illegible] के अल्प लाभ उठा सकें, जैसे पहाड़ का खोदना, कौड़ी [illegible] लाभ होना और आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना ऐसा है, जैसा [illegible] गोता लगाना, बहुमूल्य मोतियों का पाना । ;

- महर्षि दयानन्द सरस्वती

अखण्ड भारत में
विरजानन्द आश्रम
का कार्यक्षेत्र
अमृतसर
लाहौर
दिल्ली
अलीगढ़
काशी
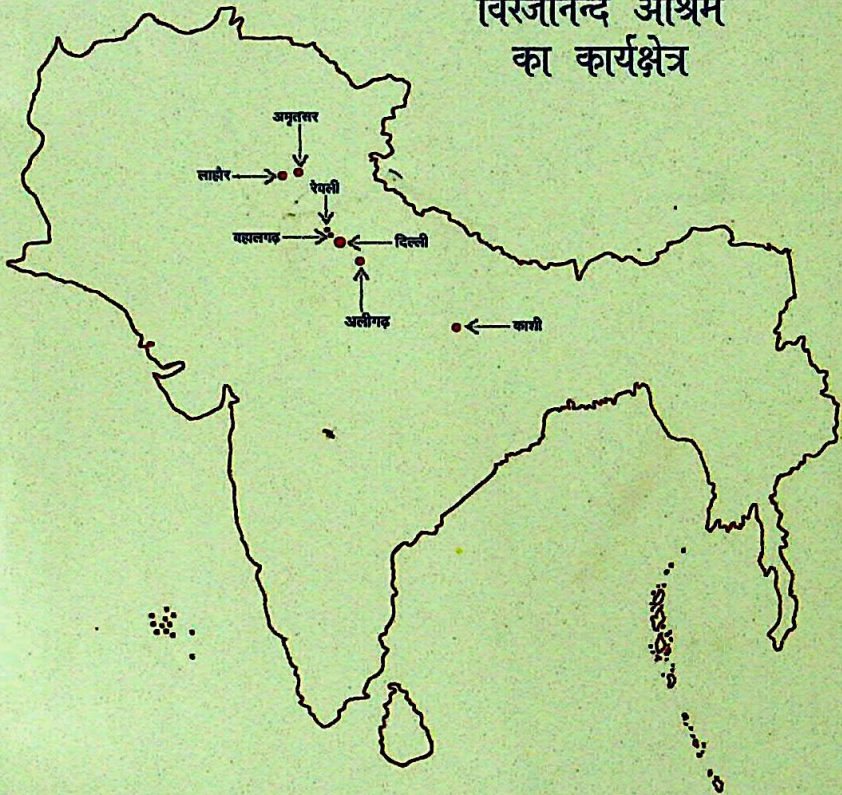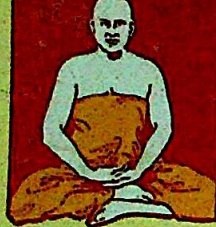
वेदोद्धारक
महर्षिदयानन्द सरस्वती

विद्या के बिना पुरुष अन्धे
के समान होता है।
विद्या ही मनुष्यों को सुख देने
वाली है, जिसने विद्याधन न पाया
वह भीतर से सदा दरिद्र सा रहता है।

संस्था का उद्देश्य

भारतीय संस्कृति तथा वैदिक
वाङ्मय का अध्यापन और
अनुसंधान
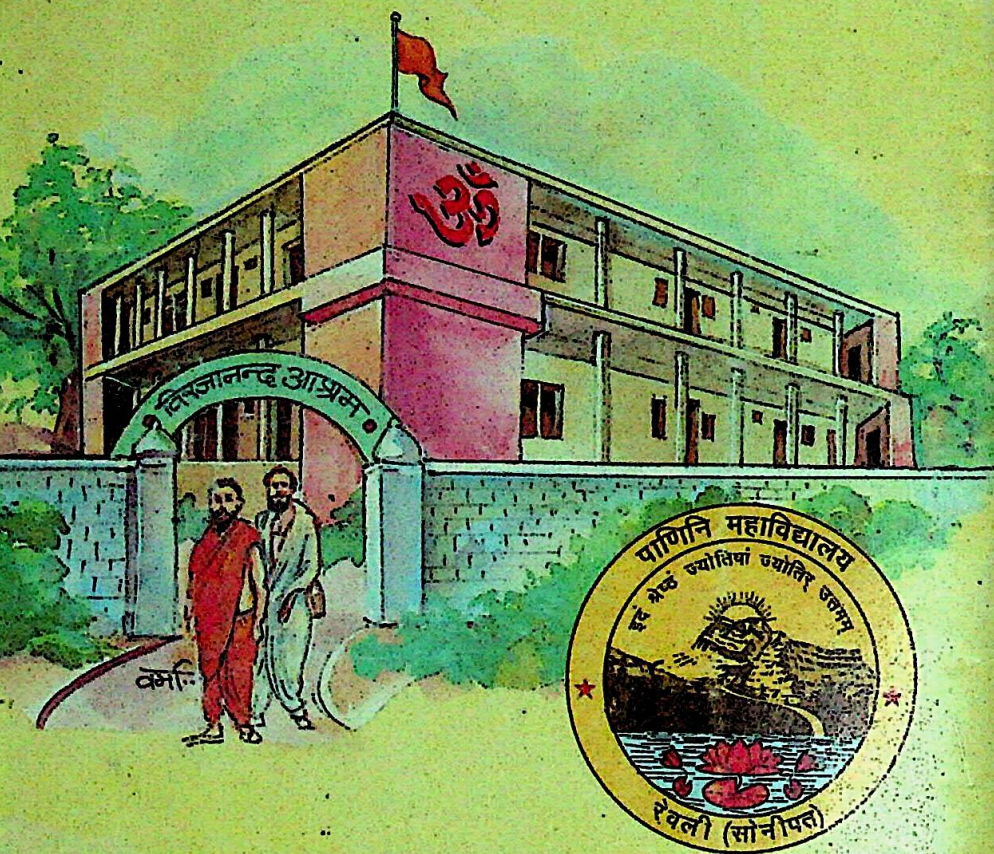
विरजानन्द आश्रम, पाणिनि महाविद्यालय

ग्राम - रेवली, सोनीपत, हरियाणा - १३१००१